1861 का अधिनियम

कारण -

भारतीयों को कानून बनाने वाली परिषदों में भाग लेने की आवश्यकता -

1858 के अधिनियम ने कंपनी के शासन का अंत कर दिया और भारत को क्रिटेन के अधीन कर दिया गया। इस प्रकार एक पुराने युग का अंत हुआ और नए युग का आरंभ हुआ। 1857 की घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया था कि भारतीयों को शासन से बिल्कुल अलग रखना खतरनाक था; इसलिए 1857 के विद्रोह की समाप्ति के बाद गवर्नर जनरल की कौंसिल (परिषद) के सदस्य बार्टल फ्रेरी ने इस बात पर बहुत बल दिया कि भारतीयों को कानून बनाने वाली परिषदों में कुछ भाग दिया जाय ताकि सरकार को यह पता लगता रहे कि जो कानून उनके लिए बनाए जा रहे हैं, वे ठीक हैं या नहीं।

2- भारत में कानून बनाने की दोषपूर्ण पद्धति —

भारत में अंग्रेजी सरकार द्वारा जो कानून बनाए जा रहे थे, उनको बनाने वाली पद्धति दोषपूर्ण थी। इसका कारण यह है कि गवर्नर जनरल की कानून बनाने वाली परिषद् में कोई गैर सरकारी सदस्य नहीं था। इसमें सभी सरकारी अधिकारी ही थे। इसका अर्थ यह हुआ कि गवर्नर जनरल की कौंसिल में जनता का प्रतिनिधि कोई भी नहीं था।

3. प्रान्तीय कानूनों के बनाने में कठिनाई —

यद्यपि गवर्नर जनरल की कौंसिल में प्रांतों का एक-एक प्रतिनिधि शामिल कर दिया गया था परंतु फिर भी न तो कौंसिल के पास इतना समय होता था कि वह इन प्रांतों की स्थिति का गहरा अध्ययन करके कानून बनाए और न ही इन प्रांतों के बारे में कोई ज्ञान और अनुभव होता था। इसलिए इन प्रांतों के लिए ठीक कानून नहीं बन पाता था।

[illegible]

[illegible]

[illegible] सदस्य [illegible] गवर्नर जनरल से [illegible] इसकी माँग और भारत सचिव से माँगी। जनरल से भी गुप्त पत्र व्यवहार [illegible] की कौंसिल [illegible] रखनी के [illegible] करती थी। इसकी कोई काम मात्र सलाह का नहीं [illegible] को दिए हुए आदेशों के अनुसार कानून पास करने से इंकार कर दिया और लार्ड कैनिंग के [illegible] सर चार्ल्स वुड ने गवर्नर जनरल की कौंसिल के इस रवैये का बार-बार विरोध किया और कहा कि कौंसिल को इतनी शक्तियाँ नहीं दी गई थी परन्तु कौंसिल ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। इससे काम-काज में बड़ी कठिनाई अनुभव होने लगी।

लार्ड कैनिंग (तत्कालीन वायसराय) ने इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए कुछ सिफारिशें भारत सचिव को भेजी। लार्ड कैनिंग की

ये सिफारिशें उस विधेयक का आधार बनीं जो चार्ल्स वुड ने कामन सदन में 6 जून, 1861 को प्रस्तुत किया और जो कानून बनने के बाद भारत परिषद का 1861 का अधिनियम कहलाया।

इसको 1 अगस्त 1861 को ब्रिटेन की महारानी की अनुमति (Assent) प्राप्त हो गई। यह अधिनियम 1861 में अन्त में लागू हुआ।

1861 के अधिनियम की मुख्य धाराएं अथवा उपबन्ध

इस अधिनियम की प्रस्तावना में घोषणा की गई, "जहाँ यह वांछनीय है कि भारत के गवर्नर जनरल की परिषद के गठन और कार्यों के बारे में संसद के पहले अधिनियमों के मुख्य उपबन्ध इकट्ठे किए जाएं और कुछ सीमा तक संशोधित किए जाएं तथा बम्बई और फोर्ट सेंट जॉर्ज के सपरिषद राज्यपालों को कानून तथा विनियम बनाने की शक्ति दी जाए और इसी प्रकार की व्यवस्था भारत के अन्य भागों में की जाए।

इस अधिनियम की अन्य धाराएं इस प्रकार थीं :

1) वायसराय की कौंसिल में एक और सदस्य की वृद्धि — एक सदस्य को बढ़ा दिया गया। इसके लिए यह आवश्यक था कि वह वित्त का बड़ा भारी ज्ञाता हो।

2) गवर्नर जनरल को अपनी कौंसिल के सदस्यों में विभिन्न कार्य के बांटने की शक्ति दी गई — इसके बाद कार्यकारिणी परिषद के सदस्यों में विभाग बांट दिए गए। अब वे अपनी इच्छा से सारा कार्य कर सकते थे और महत्वपूर्ण विषय गवर्नर जनरल के सामने रखे जाते थे। मतभेद होने पर सारी कौंसिल उसपर विचार करती थी।

3) गवर्नर जनरल को यह शक्ति दी गई कि वह अपनी कार्यकारिणी परिषद का काम चलाने के लिए नियम और विनियम बना सके।

Date -6-

4 — इस अधिनियम के द्वारा गवर्नर जनरल की विधान परिषद के कार्यों को भी केवल कानून बनाने तक ही सीमित कर दिया गया। इसके द्वारा बनाए गए कानूनों की अंतिम स्वीकृति G.G के हाथ में थी। इसको भारत की सारी ब्रिटिश और भारतीय प्रजा के लिए कानून बनाने का अधिकार दिया गया।

5. गवर्नर जनरल को यह अधिकार दिया गया कि वह अपनी अनुपस्थिति में काम चलाने के लिए किसी व्यक्ति को कौंसिल का प्रधान नामजद करे।

6. नये प्रान्त बनाने का अधिकार —
गवर्नर जनरल को कानूनी उद्देश्यों के लिए नए प्रांत बनाने, उनकी सीमाओं में परिवर्तन करने और आवश्यकता के अनुसार बांटने का अधिकार दिया गया।

7. गवर्नर जनरल की कौंसिल के आकार में वृद्धि —
गवर्नर जनरल को कम-से-कम 6 और अधिक-से-अधिक

Date 7

12 सदस्य अपनी कार्यकारिणी परिषद में कानून बनाने के लिए बढ़ाने का अधिकार दिया गया। यह भी व्यवस्था की गई कि इनमें आधे से अधिक ऐसे सदस्य लिए जाएंगे जो सरकारी अधिकारी न हों। वे दो वर्ष तक अपने पद पर रहेंगे।

8. प्रांतों को कानून बनाने की शक्ति का वापस मिलना —

बम्बई और मद्रास की सरकारों को अपनी कौंसिल में कानून बनाने के लिए एक महाधिवक्ता (Advocate-General) तथा कम-से-कम चार और अधिक से अधिक आठ सदस्य बढ़ाने की आज्ञा दी गई। इन कौंसिलों का कार्य केवल कानून बनाना था। इन्हें किसी और कार्य में हस्तक्षेप करने की आज्ञा नहीं दी गई। इनके द्वारा बनाए हुए कानूनों की अंतिम स्वीकृति गवर्नर-जनरल से ली जाती थी।

9. लेफ्टिनेंट-गवर्नरों की नियुक्ति —

G.G. को छोटे २ प्रांतों के लिए लेफ्टिनेंट गवर्नर तथा कानून बनाने के लिए विधान परिषद

(Legative Council)

बनाने का अधिकार दिया गया।

10. अध्यादेश जारी करने का अधिकार—

1857 में G.G को बड़े संकट का सामना करना पड़ा था। अतः 1861 के ऐक्ट के अनुसार उसे अध्यादेश (ordinance) जारी करने का अधिकार दिया गया। ये अध्यादेश 6 महीने तक जारी रह सकते थे। 6 महीने से पहले भी भारत सचिव तथा उसकी कौंसिल और गवर्नर जनरल की विधान-परिषद उसे रद्द कर सकती थी।

11. सेनापति को अतिरिक्त सदस्य नियुक्त किया जाना—

भारत सचिव को यह शक्ति दी गई कि वह सेनापति को गवर्नर-जनरल की परिषद का अतिरिक्त सदस्य नियुक्त कर सके।

12. परिषद के कार्यों का हस्तान्तरण—

G.G सपरिषद को यह अधिकार दिया गया कि वह आवश्यकता पड़ने पर कानून तथा विनियम बनाने के अतिरिक्त अपने शुद्ध

Date
Page 9

अथवा सब कार्य G.G. की स्वीकृति से उसे सौंप दे।

13. G.G. की विधान परिषद का पुनर्गठन- 1861 के भारतीय परिषद अधिनियम के अनुसार G.G की उस विधान परिषद का पुनर्गठन किया गया जो 1853 के चार्टर अधिनियम के अनुसार स्थापित की गई थी। प्रांतों के प्रतिनिधि इसप्रकार G.G. की परिषद में शामिल नहीं किए गए क्योंकि प्रांतीय परिषदों को निर्धारित क्षेत्र में अपने कानून बनाने की शक्ति दे दी गई थी। यह निर्धारित किया गया कि G.G की कार्यकारिणी परिषद को कम से कम 6 और अधिक से अधिक 12 अतिरिक्त सदस्यों के साथ कानून बनाने की आज्ञा होगी। इस तरह से G.G की कार्यकारिणी परिषद को अतिरिक्त सदस्यों को मिलाकर कानून बनाने की शक्ति प्रदान की गई।

14- कुछ महत्वपूर्ण मामलों जैसे सार्वजनिक ऋण, सेना सिक्के तथा नोट विदेशी और राजनीतिक विभागों और डाक तथा तारघर के मामलों से संबंधित

विधेयकों को प्रस्तुत करने से पूर्व महाराज्यपाल की अनुमति आवश्यक होगी

15. प्रांतीय सीमाओं में परिवर्तन का अधिकार महाराज्यपाल को दिया गया — यदि वह आवश्यक समझे।

16. छोटे प्रांतों के लिए परिषदों की स्थापना — इस अधिनियम में महाराज्यपाल को अधिकार दिया गया कि उ० प० प्रांतों तथा पंजाब के लिए परिषदों की स्थापना कर सके। इस बारे में G.G अपने विवेक या इच्छा से काम कर सकता था।

17. बंगाल, मद्रास तथा बम्बई की परिषदों का विस्तार — प्रत्येक प्रेसीडेन्सी (बम्बई, मद्रास तथा बंगाल) के राज्यपाल को यह शक्ति दी गई कि कम-से-कम 4 तथा अधिक से अधिक सदस्य 8 अतिरिक्त सदस्य और 1 महाधिवक्ता अपनी कार्यकारिणी परिषद में कानून बनाने के लिए रख सके। मनोनीत सदस्यों में से आधों से कम गैर-सरकारी अधिकारी

(non-official) नहीं होंगे। यानि कम से कम आधे गैर सरकारी अधिकारी होंगे। अतिरिक्त सदस्यों की अवधि दो वर्ष रखी गई।

प्रांतीय विधान परिषदें केन्द्र द्वारा लगाई गई परिसीमाओं (रुकावटों) तथा उसके अंतिम नियंत्रण में रहते हुए कानून बना सकती थी। यदि किसी प्रांतीय विधेयक का सार्वजनिक राजस्व सार्वजनिक ऋण, सेना, विदेशी तथा राजनीतिक विभागों पर प्रभाव पड़ता था। उसके संबंध में G. G की पूर्व स्वीकृति लेना आवश्यक था।

अधिनियम का महत्व

1861 के एक्ट का महत्व बताते हुए कहा गया कि 'इसके द्वारा गवर्नर-जनरल को कानून बनाने के कार्य में भारतीयों को साथ लेने का अधिकार दिया गया। इसने बम्बई और मद्रास की विधान परिषदों को दुबारा कानून बनाने का अधिकार दिया गया और अन्य प्रांतों के लिए भी ऐसी ही व्यवस्था की गई। इस तरह उस नीति का प्रारंभ हुआ जिसके कारण

1937 में प्रांतों को 1935 के एक्ट के अनुसार अन्दरूनी मामलों में स्वराज्य दे दिया गया। इसके द्वारा भारत सरकार का ढाँचा कायम किया गया, जो अनेक परिवर्तनों के बावजूद काफी समय तक कायम रहा।

इसने स्थानीय ज्ञान और प्रतिभा को स्थानीय समस्याओं के हल के ~~लिए~~ लिए स्वीकार कर लिया। इसके साथ केन्द्रीकृत विधि निर्माण का अंत हुआ और विकेन्द्रीकरण व्यवस्थापन विधान का युग आरंभ हुआ। यह भी प्रतीत हुआ कि अधिनियम ने केन्द्रीय और प्रांतीय विधान परिषदों के क्षेत्राधिकार को अलग नहीं किया और कई बार केन्द्रीय विधान मंडल ने एकरूपता के खातिर स्थानीय क्षेत्राधिकार में हस्तक्षेप किया।

अधिनियम की आलोचना -

इस अधिनियम की आलोचना करते हुए सर चार्ल्स वुड ने स्पष्ट घोषणा की "भारत की तत्कालीन अवस्था में प्रतिनिधि संस्थाओं की स्थापना असंभव है।" इसके बावजूद सदन में यह भी शिकायत की कि इसके निर्माताओं के विरोधी इरादों के बावजूद परिषद एक विवाद करने वाली सभा या संसद बन गई। इसलिए इन परिषदों का क्षेत्र केवल परामर्शन तक सीमित था।

2) दो दशकों तक गैर सरकारी अधिकारी, जो कि गवर्नर जनरल की परिषद में वैधानिक (कानूनी) उद्देश्यों के लिए शामिल किए गए, वे या तो राजे, महाराजे थे या उनके दीवान (मुख्यमंत्री अथवा वित्तमंत्री), बड़े जमींदार अथवा सेवानिवृत्त अधिकारी थे। राजे महाराजे और उनके दीवानों ने ब्रिटिश भारत के लिए कानून बनाने में कोई रुचि नहीं दिखाई क्योंकि इसका उनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। उनमें से कुछ ने ब्रिटिश सरकार के इस ~~प्रभ~~ प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया कि उन्हें वैधानिक

परिषदों में भाग लेना चाहिए और वे किसी बैठक में अनुपस्थित नहीं हुए और यदि उनमें से किसी ने बैठक में भाग भी लिया तो उसने अंग्रेजी भाषा से अनभिज्ञ होने के कारण कोई उत्साह नहीं दिखाया।

3- इस ऐक्ट का उद्देश्य भारतीय जनता को विधान परिषदों में कोई प्रतिनिधित्व देना नहीं था। लेकिन क्योंकि चार्ल्स वुड ने भारतीयों को प्रतिनिधित्व देना असंभव बताया। लेकिन वुड ने देशी राजाओं, भारतीय सामन्तों (जागीरदारों) और उच्च वर्ग के भारतीयों को कानून बनाने के कार्य के साथ मिलाना आवश्यक समझा। इसलिए गवर्नर जनरल ने महाराजा पटियाला, महाराजा ग्वालियर और बनारस के राजा को अपनी विधान परिषद का सदस्य मनोनीत कर दिया। ये व्यक्ति भारतीय जनता के प्रतिनिधि नहीं थे और नहीं ही इन्होंने कानून बनाने में कोई रुचि दिखाई। इसलिए 1861 के ऐक्ट से जो आशा की गई थी, वह पूरी नहीं हुई। भारतीयों का इस ऐक्ट से असंतुष्ट और निराश होना स्वाभाविक था।

4. विधान परिषदों की शक्तियों को बहुत सीमित कर दिया गया। उन्हें संसद की तरह बात करने की आज्ञा नहीं दी गई। उन्हें कार्यकारिणी परिषद के सदस्यों को हटाने का कोई अधिकार नहीं दिया गया। उनके कानून बनाने के अधिकारों पर अनेक प्रकार की रुकावटें लगा दी गई।

5. गवर्नर जनरल को अपनी विधान परिषद और प्रांतीय विधान परिषदों के कानूनों पर निषेधाधिकार (veto) लगाने का अधिकार दिया गया। इससे सारी अंतिम शक्तियाँ गवर्नर जनरल के हाथ में आ गई और वह न केवल शासन संबंधी मामलों में बल्कि कानूनी मामलों में भी अपनी मनमानी कर सकता था।

6. भारत में कोई उत्तरदायी सरकार नहीं स्थापित की गई।